Marriage among different ethnic groups.
(भारत के विभिन्न समुदायो मे विवाह) Paper-II

मुस्लिम विवाह :-

विवाह एक सार्वभौमिक संस्था है, परंतु वैवाहिक नियम एवं विवाह के उद्देश्य विभिन्न समाजो मे अलग अलग देखने को मिलते है। मुस्लिम विवाह जिसे निकाह कहा जाता है हिन्दुओ के विवाह की भाँति पवित्र संस्कार ना हो कर एक सामाजिक समझौता माना जाता है। दरअसल, मुस्लिम विवाह शरीयत के नियमो पर आधारित है। जैसा कि हम जानते है कि मुस्लिम समाज शिया, सुन्नी दो समूहो में विभाजित है, किन्तु सुन्नी कारण ही भारत में सामान्यतः लागू होता है, शिया समुदाय की संख्या बहुत ही कम है।

रेनाल्ड विल्सन के अनुसार मुस्लिम विवाह यौन समागम को वैधानिक बनाना और बच्चो को जन्म देना मात्र है। एस. सी. सरकार का भी मानना है कि मुसलमानो में विवाह पवित्र संस्कार नहीं है, बल्कि एक विशुद्ध सामाजिक समझौता है। लेकिन मुस्लिम विवाह का यह चित्र सही नही है। मुस्लिम समाज मे विवाह एक धार्मिक कर्तव्य भी है। यह श्रद्धा तथा इबादत की एक क्रिया है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि जो मुसलमान इस कार्य को एक धार्मिक क्रिया मान कर करता है उसे परलोक मे पुरस्कार मिलता है और जो ऐसा नही करता वह पाप का भागीदार। आवश्यक रूप से एक होता है। अंग ने स्पष्ट शब्दो मे कहा है कि निकाह आवश्यक रूप से एक समझौता है, किन्तु साथ ही यह श्रद्धा का भी कार्य है।

मुस्लिम विवाह की प्रथम आवश्यकता है, प्रस्ताव रखना और उसकी स्वीकृति यद्यपि में दोनो बाते हिन्दू विवाह मे भी पायी जाती है, पर हिन्दुओ मे प्रस्ताव एवं स्वीकृति जहाँ माता पिता के स्तर पर होती है, वही मुस्लिम विवाह में लड़की की स्वीकृति आवश्यक है। लड़का दो गवाहो तथा मौलवी की उपस्थिति मे लड़की के सामने विवाह प्रस्ताव रखता है और लड़की की खामोशी के बाद से प्रस्ताव की स्वीकृति मिलती है। अतः विवाह समझौता दो गवाहो द्वारा प्रमाणित किया जाता है। ये दोनो गवाह मुस्लिम पुरुष होते है। गैर मुस्लिम गवाह का कोई महत्व नही है।

मुस्लिम विवाह का दूसरा लक्षण यह है कि व्यक्ति मे विवाह समझौता करने की योगयता होनी चाहिए, क्योकि केवल वयस्क और समझदार व्यक्ति ही समझौता को समझ सकता है। दूसरे शब्दो मे, बाल विवाह मुसलमानो मे अमान्य है। मुस्लिम विवाह का तीसरा लक्षण यह है कि यह समानता के सिद्धान्त पर आधारित है। यद्यपि निम्न स्तर के व्यक्ति के साथ विवाह संविदा करने का कोई कानूनी निषेध नही है, फिर भी इस प्रकार के विवाह को हेय दृष्टि से देखा जाता है। भागकुर किए गए विवाह जिसे 'किपुर' कहते है, मान्य नही है। मुस्लिम विवाह का चौथा लक्षण है, अधिमान्य व्यवस्था जीवन साथी के चुनाव में पहली अधिमान्यता सजातीय सहोदरज को और इसके बाद विजातीय सहोदरज को दी जाती है। यद्यपि दोनो प्रकार के सहोदरज विवाह को मान्यता प्राप्त है पर कुफु के

नियमो का पालन अवश्य किया जाता है।

मुस्लिम विवाह में मेहर का बहुत अधिक महत्व है। मेहर वह धन है जो विवाह के प्रतिफल के रूप मे पत्नी अपने पति से लेने का अधिकार रखती है, मुस्लिम नियमो के अंतर्गत मेहर पति पर एक कर्तव्य है जो कि पत्नी के प्रति आदर का सूचक होता है। इसे तरह यह वधू मूल्य नही है। इसके मुख्य उद्देश्य है - पति पर पत्नी को तलाक देने संबंधी नियंत्रण रखना तथा पति की मृत्यु अथवा तलाक के बाद पत्नी को अपने भरण - पोषण के योग्य बनाना मेहर की धनराशि विवाह से पहले बाद मे या फिर विवाह के समय निश्चित की जाती है। मेहर की राशी लड़की की सुन्दरता एव गुण, उसकी पारिवारिक पृष्ट भूमि आदि के आधार पर तय की जाती है मेहर का संबध सहवास से है, क्योंकि बिना मेहर की राशि तय किए पति - पत्नी से सहवास की अधिकारी नही बनता है।

मेहर की कई तरह के होते है। जैसे :-

(i) निर्दिष्ट मेहर :- दोनो पक्षो द्वारा तय की गयी राशी होती है।

(ii) उचित मेहर :- जब मेहर की शशि तय न कर के जो मुनासिब समझा जाता है वह दे दिया जाता है, तो उसे उचित मेहर कहते है।

(iii) तुरंत मेहर :- माँगे जाने पर दी जाने वाली मेहर की राशी को तुरंत मेहर (फोरी) भी कहते है।

(iv) स्थगित मेहर :- जो मेहर तलाक के बाद दिया जाता है उसे स्थगित मेहर कहते है।

मुस्लिम कानून के अन्तर्गत मेहर के लिए विधवा का दावा अपने पति की मृ-सम्पत्ति के विरुद्ध एक कर्म है। पति की सम्पत्ति पर पत्नी का उतना ही अधिकार है, जितना अन्य देनदारों का है। वह मेहर की रकम अदा किए जाने तक सम्पत्ति को अपने पास रोक सकती है। परंतु यदि, तलाक खुला या मुबारत हुआ है तो महिला को मेहर का अधिकार खत्म हो जाता है।

मुसलमानों मे अस्थायी विवाह का प्रचलन भी है, जिसे मुताह विवाह कहते है। मुताह विवाह से प्राप्त पत्नी को सिघा (Sigha) नाम से जाना जाता है। इस प्रकार के विवाह की दो आवश्यक बाते है:-

(i) सहवास की अवधि पहले ही निश्चित होनी चाहिए।

(ii) मेहर की राशी पहले ही निश्चित होनी चाहिए।

यदि अवधि निश्चित नही है और मेहर निश्चित तो विवाह स्थायी माना जाता है, किन्तु अवधि निश्चित है और मेहर निश्चित नही है तो विवाह अवैध माना जाता है। मुताह विवाह स्त्री-पुरुष के बीच विरासत के अधिकार को प्रदान नही करती है और न ही 'सिघा' पत्नी भरण-पोषण की राशि का दावा कर सकती है। मुस्लिम विवाह मे मुताह को हेय दृष्टि से देखा जाता है।

फासिद विवाह:- विवाहो के बीच कोई कठिनाई आए अर्थात् किन्ही कारणो से कुछ अनियमितताए रह जाए और उन्हे दूर किए बिना ही विवाह कर लिया जाए तो ऐसे विवाह को फासिद विवाह कहते है।

ऐसे विवाह में आने वाली कठिनाइयों या अनियमितताओं को दूर करने पर विवाह नियमित माने जाते है। यदि कोई मुसलमान पांचवी स्त्री से, किसी मूर्ति पूजक स्त्री से या बिना गवाहो की उपस्थिति के विवाह कर ले तो ऐसे विवाह फासिद विवाह कहलाता है। ऐसा विवाह उस समय सही विवाह या नियमित विवाह हो जाता है जब पहली चार पत्नियो मे से किसी एक को तलाक दे दिया जाए स्त्री धर्म परिवर्तन करके मुसलमान बन जाए या बाद मे विवाह के लिए गवाही ले ली जाए।

मुस्लिम कानून के अन्तर्गत विवाह समझौता है, जो दोनो मे से किसी भी पार्टी के द्वारा आदालती कार्यवाही द्वारा समाप्त किया जा सकता है। या बिना अदालत के हस्तक्षेप को भी न्यायित प्रक्रिया द्वारा मुस्लिम विवाह अधिनियम 1939 के अन्तर्गत तलाक प्राप्त किया जा सकता है। न्यायित हस्तक्षेप के बिना भी पति की इच्छा से तलाक हो सकता है, या फिर पति-पत्नी की आपसी सहमति से भी, जिसे खुला या मुबारत कहते है। खुला और मुबारत में अंतर यह है कि खुला तलाक मे पहले पत्नी की ओर से होती है जबकि मुबारत मे पहले किसी की भी हो सकती है, क्यो कि दोनो पक्ष इच्छुक होते है।

तलाक निम्नलिखित तीन तरह से दिया जा सकता है।

(i) तलाक-ए-अहसन :- इसके अंतर्गत तलाक की घोषणा मासिक धर्म की अवधि (तुहर) मे एक ही बार की जाती है और इद्दत की अवधि तक यौन संबंध स्थापित नही किया जाता है। शियाओ

में इस तरह के तलाक की मान्यता नहीं दी जाती है। सुन्नियों में भी नशे की हालत में या गंभीर धमकी की अवस्था में किए गए तलाक की घोषणा निरर्थक होती है।

(ii) तलाक - ए - हसन :- इसमें तीन घोषनाएँ सम्मिलित होती है, जो लगातार तीन मासिक धर्म की अवधि में की जाती है और इस अवधि में किसी भी प्रकार का यौन संबंध स्थापित नहीं किया जा सकता है।

(iii) तलाक - ए - उल - बिद्दत :- इसके अंतर्गत एक तुहर की अवधि में एक वाक्य में तीन घोषणाएं करने से "मैं तुम्हें तलाक देता हूँ" तलाक हो जाता है।

इस प्रकार प्रथम दो प्रकार अहसन और हसन के तलाक के अंतर्गत दोनों ही पक्षों पक्षों में समझौते के अवसर होते हैं, किन्तु तीसरे में नहीं। तलाक - ए - अहसन को अधिक मान्यता प्राप्त है। इन तीनों प्रकार के तलाकों के साथ साथ 1937 के शरीयत कानून के अनुसार निम्नलिखित प्रकार के तलाकों का भी उल्लेख है:-

(i) इला :- यदि पति यौन परिपक्वता प्राप्त करने के बाद निर्दिष्ट अवधि तक कम से कम चार महीना यौन संपर्क से अलग रहने का सौगंध लेता है तो वह इला करता है। यदि वह इस अवधि में यौन संबंध स्थापित नहीं करता है तो विवाह विच्छेद मान लिया जाता है, जैसा कि

तालाक-ए-बिद्दत मे होता है।

(ii) जिहर :- परिपक्वता प्राप्त पति दो गुवाहो के समक्ष अपने पूरे होशो-हवास मे यह घोषणा करता है कि उसकी पत्नी उसकी माँ की पीठ के समान है तो वह 'जिहर' तलाक होता है। दरअसल जिहर विवाह विच्छेद नही होते है बल्कि यह पत्नी के लिए पति से तलाक लेने के लिए एक आधार तैयार करता है।

(iii) लियान :- इसके अंतर्गत पति अपनी पत्नी पर व्यभिचार का लांछन लगाता है। यदि पति अपना आरोप वापस नही लेता है, बल्कि अल्लाह का सौगंध लेता है तो इसे लियान कहते है।

1939 मे मुस्लिम विवाह विच्छेद अधिनियम के अंतर्गत न्यायालय से न्यायिक व्यवस्था के द्वारा भी तलाक लिया जा सकता है। इस अधिनियम के आधार पर पत्नी को यह अधिकार प्राप्त है कि वह निम्नलिखित अवस्थाओ में पति को तलाक दे सकती है :-

(i) जब पति दो वर्ष तक पत्नी का भरण पोषण नही कर सके।

(ii) जब पति को सात या सात से अधिक वर्ष के लिए जेल की सजा हो जाए।

(iii) यदि चार या चार से अधिक वर्षों से पति ने पत्नी का परित्याग किया हो।

(iv) पति तीन साल तक पत्नी से सहवास नही किया हो।

(v) यदि पति नपुंसक हो।

(ii) यदि पति दो साल तक पागल हो एवं
(iii) यदि पति कोढ़ या यौन रोग से ग्रसित हो या पति क्रूर हो आदि।

मुस्लिम कानून के अंतर्गत जीवन साथी के धर्म परिवर्तन के कारण भी विवाह विच्छेद हो सकता है। पति के धर्म परिवर्तन के कारण विवाह विच्छेद तुरंत लागू होता था, पर अब नहीं। लेकिन, यह उन स्त्रियों पर लागू नहीं होता जो अन्य किसी धर्म से परिवर्तित हो कर इस्लाम में आयी हो।

जैसे: यदि कोई हिन्दू लड़की इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेती है और मुस्लिम कानून के अंतर्गत विवाह करती है तो इसके इस्लाम त्याग और हिन्दू धर्म पुनः अपनाने के बाद ही वापस नहीं आती है और कोई दूसरा धर्म अपना लेती है तो ऐसे परिवर्तन से तुरंत विवाह विच्छेद नहीं होगा।

इन सभी मामलों में विवाह विच्छेद होने पर कानूनी प्रभाव इस प्रकार होंगे :-

(i) पत्नी इद्दत का पालन करने के लिए बाध्य होती है।
(ii) इद्दत की अवधि में भरण-पोषण की व्यवस्था करने के लिए पति ही जिम्मेदार होता है एवं
(iii) पत्नी स्थगित मेहर की अधिकारी होती है।

कुछ वर्ष पूर्व सर्वोच्च न्यायलय ने मुस्लिम महिला शाहबानो को पति से तलाक मिलने पर भरण पोषण भत्ता दिया जाने के आदेश दिए थे। मुस्लिम नेताओं ने उच्चतम न्यायलय के इस कानूनी निर्णय को मुस्लिम व्यक्तिगत कानून (Muslim Personal Law) में हस्तक्षेप बताया इस कारण सरकार को प्रोटेक्शन ऑफ राईट इन डाइवोर्स एक्ट 1986 (Protection of Right in Divorce Act 1986) पास करना पड़ा। इसी प्रकार फरवरी 1989 में उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद उच्च न्यायलय ने एक तीस वर्षीय हमीदन नाम की महीला को तलाक मिलने पर उसके स्वयं के और दो बच्चो के लिए 32 वर्षीय पति से 600/ रूपये पोषण भरण दिया जाने के आदेश दिया। मुस्लिम नेताओ ने इस Muslim women Divorce Act3 के प्रावधानो की उल्लंघन बताया। ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड (All India Muslim Personal Law Board) ने तो उच्च न्यायलय के इस निर्णय के विरूद्ध एक पुनसमीक्षा न्यायिका दायर की। हाल फिलहाल मे उच्चतम न्यायलय ने सरकार को समान नागरिक संहिता [Common Civil Code] बनाने के आदेश दिये है, पर इसका भी मुस्लिम नेताओ द्वारा विरोध किया जा रहा है और सरकार ढुलमुल नीति अपनाई हुई है।